शोध संचयन
SHODH SANCHAYAN

ISSN 2249-9180 (Online)
ISSN 0975-1254 (Print)
RNI No.: DELBIL/2010/31292

Bilingual journal of Humanities & Social Sciences

Half Yearly

Vol-3 Issue-1
15 Jan-2012

मानवाधिकारों के आलोक में आधुनिक संस्कृत साहित्य

डॉ0 सुरचना त्रिवेदी

असिस्टेन्ट प्रोफेसर, संस्कृत, भगवानदीन आर्यकन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, लखीमपुर-खीरी

www.shodh.net

मानवाधिकारों के आलोक में आधुनिक संस्कृत साहित्य

विषय संकेतः- *मानवाधिकार एवं संस्कृत साहित्य, आधुनिक संस्कृत साहित्य*

मानवाधिकार की अवधारणा अपेक्षाकृत नवीन है। संस्कृत साहित्य की परंपरा में बहुत पहले से मानवाधिकारों के प्रसंग बिखरे पड़े हैं। प्रस्तुत शोध आलेख में आधुनिक संस्कृत साहित्य को मानवाधिकारों के संदर्भ में समीक्षित करने का प्रयत्न किया गया है।

सभी भारतीय नागरिकों के लिये यह राष्ट्रीय गर्व की बात है हमारे प्राचीन तथा अर्वाचीन संस्कृत ग्रन्थों में अवान्तर शब्दों में मानवाधिकारों के विचारों को सर्वोच्च महत्त्व दिया गया है।[1] आज जिन अधिकारों तथा स्वत्वों का उल्लेख किया जाता है, वे प्राचीन काल में धर्म-शिक्षा के रूप में तथा कर्त्तव्य के रूप में प्रचलित थे। अधिकार तो किए गये कर्त्तव्यों का अनुसरण करते हैं।[2] इस प्रकार मानवाधिकार वे अधिकार हैं, जो प्रत्येक मानव को मानव होने के नाते सामाजिक व्यवस्था में रहते हुए, जीवन में विकास एवं उत्कर्ष के लिए प्राप्त होते हैं। ऋग्वेद में नागरिकों की तीन स्वतन्त्रताओं, रहने के लिए घर, शरीर तथा जीवन संबंधी स्वतन्त्रताओं का स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया है। इसी प्रकार महाभारत के शान्तिपर्व, अथर्ववेद (3/3), मनुस्मृति, कौटिल्य के अर्थशास्त्र, वाल्मीकि रामायण के युद्धकाण्ड, पुराण साहित्य और यहाँ तक कि गौतम बुद्ध के अहिंसा सिद्धान्त में कर्म व मानवता के सिद्धान्त के प्रसंग में मानवाधिकारों की आधारभूत चिन्ता को देखा जा सकता है।

आधुनिक काल के प्ररिप्रेक्ष्य में विचार करने पर सर्वप्रथम आधुनिक संस्कृत साहित्य के काल निर्धारण पर विचार करना अपेक्षित है। आधुनिक संस्कृत साहित्य के काल विभाजन की विविध व्याख्याओं का विश्लेषण करने के पश्चात् समग्र रूप में सन् 1750 ई. से आधुनिक संस्कृत साहित्य का समय माना जाता है। विश्व और देश में बदलती राजनीतिक-सामाजिक स्थितियों के बोध के साथ समग्र राष्ट्र के एकात्म्य के प्रति साहित्यकारों की दृष्टि कम से कम समष्टिवादी है। अर्थात् कोई निरपेक्ष नियम (कानून) न होकर आदर्श प्रतिरूप है, जो काल और विषयवस्तु की दृष्टि से आधुनिक साहित्य का बोध कराता है।[3]

दूसरी ओर 10 दिसम्बर 1948 को संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा मानवाधिकारों की ऐतिहासिक, सार्वभौमिक घोषणा की गयी थी, जिसे सामान्यतः 'मानवता का महाधिकार पत्र' माना जाता है। भारत के संविधान में इस अन्तर्राष्ट्रीय सार्वभौमिक घोषणा का सुन्दर निरूपण संविधान की प्रस्तावना में इन शब्दों में किया गया है - हम, भारत के लोग, भारत को सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न समाजवादी पन्थ निरपेक्ष, लोक तन्त्रत्मक गणराज्य बनाने के लिए तथा उसके समस्त नागरिकों को सामाजिक (आर्थिक और राजनैतिक न्याय, विचार, अभिव्यक्ति विश्वास धर्म और उपासना की स्वतन्त्रता, प्रतिष्ठा और अवसर की समता प्राप्त कराने के लिए तथा उन सब में व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता और अखण्डता सुनिश्चित करने वाली बंधुता बढ़ाने के लिए दृढ़ संकल्प होकर अपनी इस संविधान सभा में आज तारीख 26 नवम्बर 1949 ई0 की एतद्द्वारा इस संविध ान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं। इस प्रस्तावना का एक-एक शब्द मानव के मूलभूत अधिकारों और कर्तव्यों का अत्यन्त गम्भीरता पूर्वक प्रतिष्ठापन किया गया है। भारतीय संविधान में मानवाधिकारों के प्रति एक वचन बद्धता है।[4] संवैधानिक रूप में मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम 1993 (1994 की संख्या-10) की धारा 2 घ के अनुसार-

मानवाधिकार से अभिप्राय संविधान द्वारा प्रत्याभूत तथा अन्तर्राष्ट्रीय प्रसंविदाओं में सम्मिलित एवं भारत के न्यायालयों में प्रवर्तनीय व्यक्तियों के जीवन, स्वतन्त्रता, समानता एवं गरिमा से है।[5] भारत के मानवाधिकार भारत के वे मूल अधिकार है जिन्हें कार्यान्वित करने की गारण्टी भारतीय संविधान में दी गयी है। भारतीय संविधान के संदर्भ में व्यक्ति के जीवन सम्बन्धी अधिकार संविधान के अनुच्छेद 12 में उल्लिखित है। स्वतन्त्रता का अधिकार संविधान के अनुच्छेद 19, 20, 22, 25, 26, 27, 28 तथा 29 में उल्लिखित है समानता का अधिकार संविधान के अनुच्छेद 14, 15, 16, 17 व 18 में उल्लिखित है व्यक्ति की प्रतिष्ठा सम्बन्धी अधिकार संविधान के अनुच्छेद 17, 23 व 24 में उल्लिखित है। संविधान में मूल अधिकारों की गारण्टी प्रदान करने के उद्देश्य

शोध संचयन
SHODH SANCHAYAN

ISSN 2249-9180 (Online)
ISSN 0975-1254 (Print)
RNI No.: DELBIL/2010/31292

Bilingual journal of Humanities & Social Sciences

Half Yearly

Vol-3 Issue-1
15 Jan-2012

मानवाधिकारों के आलोक में आधुनिक संस्कृत साहित्य

डॉ0 सुरचना त्रिवेदी

असिस्टेन्ट प्रोफेसर, संस्कृत, भगवानदीन आर्यकन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, लखीमपुर-खीरी

www.shodh.net

से संविधान में संवैधानिक उपचारों का अधिकार अनुच्छेद 32 तथा 35 द्वारा प्रतिपादित किया गया है। भारतीय संविधान के अनुसार - समता का अधिकार, स्वतन्त्रता का अधिकार, शोषण के विरुद्ध अधिकार, धर्म की स्वतन्त्रता का अधिकार, संस्कृति एवं शिक्षा सम्बन्धी अधिकार तथा स्त्रियों की दशा में मानवाधिकारों के अन्तर्गत परिगणित है।

चूंकि साहित्य समाज तथा युग की परिस्थितियों का स्पष्ट प्रतिबिम्ब होता है तथा युगीन परिस्थितियों से नितान्त निरपेक्ष होकर उसकी सर्जना करना, उसके सामयिक स्वरूप को नष्ट करना है। अत: स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद जब यह प्रश्न उठा कि भारतीय संविधान में उल्लिखित मानवाधि कारों का पालन किस सीमा तक किया गया है। इसका प्रभाव साहित्यिक गतिविधियों पर भी पड़ा। अत: आधुनिक संस्कृत साहित्यकारों का चिन्तन इस दिशा में भी हुआ इसके पर्याप्त उदाहरण उपलब्ध हैं। जिनका क्रमश उल्लेख किया जा रहा है।

समता का अधिकार के अनुसार विधि के समक्ष समता, धर्म, मूल, वंश, जाति, लिंग या जन्म स्थान के आधार पर विभेद का प्रतिषेध करते हुए, लोक नियोजन के विषय के अवसर की समता, अस्पृश्यता का अन्त, उपाधियों के अन्त की बात कही गयी है। इस आधार पर चिन्तन करने से यह तथ्य प्राप्त होता है कि आधुनिक संस्कृत महाकाव्यकार, गीतकार, समाज के सुख-दु:ख की सहानुभूति का भाव रखते हुए समाज में सभी मनुष्यों के प्रति समान व्यवहार करने की बात करते हैं। इनमें मानव-अधिकारों की रक्षा की स्पष्ट झलक दिखाई पड़ती है।[6]

हृदय में केवल इच्छा मात्र से साध्य की पूर्ति नहीं होती अपितु इसके लिए कर्म करना चाहिए, जब तक जनता जातीयता के दुष्ट गुणों को नहीं छोड़ती, तब तक उसे शक्ति प्राप्त नहीं होगी और न ही पराधीनता से उसकी मुक्ति होगी। अत: समाज में समानता के फलस्वरूप ही स्वतन्त्रता की प्राप्ति हो सकती हैं।[7]

कवि भगवदाचार्य ने भारत परिजात में लिखा है - सत्य के मार्ग से विचलित नहीं होना चाहिए, किसी दूसरें को हानि नहीं पहुंचानी चाहिए।.... समग्र संसार को शिवमय मानकर सभी के साथ समानता का व्यवहार करना चाहिए।[8]

अस्पृश्यता-कुप्रथा के विरूद्ध बोलते हुए कवि उमाशंकर शर्मा ने कहा है-बड़े-बड़े देव मन्दिरों का निर्माण करने वाले लोगों को ही इन मन्दिरों में जाने से रोका जाता है तथा अछूत कहा जाता है, यह कितनी लज्जास्पद बात है। यह समानता के अधिकार का हनन ही तो है।[9] प्रो0 राम कृपालु शास्त्री ने इन्द्रा शतकम् में समाज का जो स्वरूप वर्णित किया है वह मानव अधिकारों का रक्षा के लिए ही है जिसमें कहा गया है कि खाने-पीने, पहनने, रहने आदि से सम्बन्धित सभी वस्तुऐं सभी के लिए समान रूप से सुलभ हैं उसमें किसी भी वर्ण, धर्म या जाति के आधार पर भेद भाव न किया जाये।[10]

स्वतन्त्रता का अधिकार के अन्तर्गत वाक्-स्वातन्त्रय आदि विषयक कुछ अधिकारों का संरक्षण सभी नागरिकों को प्रदान किया गया है। इसके अतिरिक्त निवास की स्वतन्त्रता, वृत्ति उपजीविका आदि की स्वतन्त्रता विषयक कई खण्ड, उपखण्ड हैं-

वाक् स्वातन्त्र्य का सर्वाधिक प्रबल उदाहरण-बंकिमचन्द्रचटर्जी के, आनन्द मठ, में लिखा वन्दे मातरम् गीत है। इसी गीत से प्रेरित होकर पं. श्रीधर पाठक ने भारतस्तव:' लिखा जिसमें स्वतन्त्रता एवं राष्ट्रीयता की झलक मिलती है-वन्दे भारत देशमुदारम्, सुषमासदन सकल सुखसारम्।[11]

परतन्त्रता की पीड़ा दायक अनुभूति की व्यंजना करते हुए आनन्द तर्क चूड़ामणि लिखते है - हे पक्षी। तू धन्य है, जो तू स्वाधीनता के शुभालंकरण से विभूषित होकर स्वत: सदा स्मरण ीय कीर्ति वाले संसार के बीच भगवान का गुणगान करता हुआ विचरण रहा है।[11]

प्रत्येक व्यक्ति के मूल कर्तव्यों एवं मूल अधिकारों की रक्षा के विषय में स्वामी दयानन्द सरस्वती, स्वामी विवेकानन्द, लोकमान्य तिलक आदि राष्ट्रीय नेता व महापुरुषों ने जो कुछ भी कहा या कि या वह सब मानवाधिकारों की रक्षा के लिए था।[13]

'आर्योदय' में स्वतन्त्रता के अधिकार के विषय में पर्याप्त सामग्री है इसके अतिरिक्त 'राघवीयम्'[14] में भी इस संदर्भ में लिखा गया। प्रो0 उमा शंकर त्रिपाठी ने रास भारती में कहा-जब लोग आलस्य रहित होकर उद्यम करने लगे, तब स्वतन्त्रता सुविधा की भांति नित्य प्रवर्धित-होकर अमृत-फल देने लगी।[15] इसी प्रकार कवि अन्नदाचरण ने त्वं गच्छामि कविता में स्पष्ट भाव व्यक्त किये कि अभिमान तथा विषम हिंसा यह सब ओर निरन्तर फैल रहे हैं। हे भगवान। कहा जाऊँ, कहाँ शान्ति है ?[16]

शोषण के विरूद्ध अधिकार - इसके अन्तर्गत मानव के दुर्व्यपार तथा बलात श्रम का परिशेध, कारखानों आदि में बालकों के नियोजन का प्रतिषेध आदि आते हैं। समाज में दो वर्ग के लोग होते हैं। सम्पन्न तथा विपन्न। सम्पन्न वर्ग द्वारा विपन्न वर्ग के शोषण की प्रथा सदा ही समय को कलुषता से युक्त करती रही है। इस मानवी पोषण पद्धति को दूर करने का प्रखर स्वर विशन

शोध संचयन
SHODH SANCHAYAN

ISSN 2249-9180 (Online)
ISSN 0975-1254 (Print)
RNI No.: DELBIL/2010/31292

Bilingual journal of Humanities & Social Sciences

Half Yearly

Vol-3 Issue-1
15 Jan-2012

मानवाधिकारों के आलोक में आधुनिक संस्कृत साहित्य

डॉ0 सुरचना त्रिवेदी

असिस्टेन्ट प्रोफेसर, संस्कृत, भगवानदीन आर्यकन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, लखीमपुर-खीरी

www.shodh.net

लाल गौड़ व्योम शेख की काव्य रचना अग्निजाह में बड़े सुन्दर ढंग से किया गया है-

उद् बुधयस्वाग्ने। प्रजागर मन्त्रनाद: विश्वजन स्वापनाशी लोपयंस्तन्द्राम् प्रात: सवनेषु समुदीरित: केन ?[17]

एक दु:खिनी श्रमिका के भूखे नंगे बालक का करूण चित्र खींचते हुए कवि ने जो कहा है उसमें निर्धन शोषण की बात स्पष्ट प्रकट हो रही है -

रे नग्न: क्षुधित: स्वपिति देशस्य भाग्यं रोदिति,
श्रमिकया अयं बाल:।[18]

राज भक्ति की ओर से आधुनिक संस्कृत कवियों ने देश की दरिद्रता का स्वरूप यथार्थ खरे शब्दों में प्रकट किया है।[19] इसके अतिरिक्त डॉ0 राधावल्लभ त्रिपाठी ने 'शंखनाद: में, प्रो0 कमलेश दत्त त्रिपाठी ने 'धान्या ममेयं धारा' में वर्तमान समय में मानवाधिकारों के हनन के कारण राजनीति, भ्रष्टचार एवं बेराजगारी को बताया है।

यत्र धवा्क्षनिभा विरापटवों नेतृत्व संसाधका, उत्कोचैकपरा जनस्यहरणे परंगता सहिबा।
पूँजी स्वामि-हितैकसाधानरता: कुम्भोदरा नायका
राजन्यते खलु राजनीति भुजगा धान्या ममेयं धारा।
लोकोयातु रसातलं दिव मनागुच्चैस्तरां राजतां।
मूल्यं सा हि कथा समस्त जगतामेषा विकास क्रिया।
लक्ष्यं मास्तु चलन्तु वृत्ति रहिता हिप्पी युवानो मुधा।
क्रान्तिर्गच्छतु कृ्चुकं भुविं परं धान्या ममेयं धारा।।[20]

अंग्रेजों के अत्याचार और भारतीय जनता की दीन दशा का अनुभव करते हुए उस काल में अकाल पीड़ित देश की भयावह दशा का चित्रण मूल अधिकारों के हनन को उजागर करता है -

एकं तन्मृतनग्नाङ्मं निष्प्रच्छदमातपशीतम्
योरपगृध्राणामेकं कबलमहहा रक्तच्युतिदिग्धाम्।
एकं प्रेतवनं तद् यत्र न कश्चिच्छोकालापी एको भ्राम्यन्नात्मा यस्यनगेह: कोऽपि क्वापि।[21]

इसी प्रकार वीरोदय काव्य में पशुबलि तथा स्वार्थ परता पर प्रहार करते हुए कहा गया -

स्वीयां पिपासा शमयेत परासृजा क्षुधां परप्राण विपत्तिभि: प्रजा। परं फलतं हियतेऽन्यतो हटाद्विकीर्यते स्वोदरपूर्तये सत्र।[22]

इस प्रकार शोषण के विरुद्ध अधिकार का पूर्ण प्रयोग संस्कृत साहित्य में प्राप्त होता है।

धार्मिक स्वतन्त्रता का अधिकार के अन्तर्गत अन्त:करण की और धर्म के अबाधरूप से मानने, आचरण और प्रचार करने की स्वतन्त्रता, धार्मिक कार्यों के प्रबंध की स्वतन्त्रता का अनेक उपखण्डों के साथ वर्णन है।

संसार में विभिन्न रहन-सहन एवं धर्मों के मानने वाले लोग हैं किन्तु उन सभी धर्मों के मूल में एक ही तत्त्व समान है- वह है - मानवता। 'कथमहं नास्तिक:' कविता में छद्म ध र्मिकता का विरोध करके सभी धर्मों में समन्वयात्मकता की भावना स्थापित करते हुए युगानुरूप सच्ची आस्तिकता का स्वरूप लक्षित हो रहा है। जिसमें ईश्वर से प्रार्थना की गई है। कि 'हम सभी प्राणियों के प्रति दया का व्रतधारण करें तथा स्वच्छश्वेत चन्दन' रस से भी अधिक शैत्य प्रदान करने वाले परोपकार से सदा आनन्दित रहें।

सर्वेषु जीव निचयेषु दयाव्रतं में श्रेयों ददातु निखिलं नियत व्रतानां। अच्छाच्छ चन्दन रसादपि शीतदो वा मानन्दयात्वनिशमीश परोपकार :।।[23]

विभिन्न कुरीतियों का विद्रोह करते हुए भी हमें धर्म से डिगना नहीं चाहिए 'वीरोदय' महाकाव्य में ऐसे समाज का चित्रण है, जिसमें लोगों की धर्म एवं मानवता के प्रति आस्था है तथा भारतीय संस्कृति के मूल तत्त्व अधिकारिक मात्र में उपलब्ध हैं। मुनियों का कर्त्तव्य लोगों में धर्म के प्रति चेतना लाना, शासन प्रजानुरंजन करते हुए शासन करें, वणिग्जन अर्थव्यवस्था को संम्भालें, सेवा नि:स्वार्थ सेवा करें। परन्तु यह वर्ण व्यवस्था जन्म के अनुसार न होकर कर्म के अनुसार हो।[24]

संस्कृति व शिक्षा सम्बन्धी अधिकार में सभी अल्पसंख्यक वर्गों के हितों का संरक्षण, शिक्षा संस्था में प्रवेश का सभी को अधिकार दिया गया है। जिसमें अनेक खण्ड व उपखण्ड हैं।

धर्मशास्त्र के इतिहास में उल्लेख है- बिना आध्यात्मिक मूल्यों के पुनर्जागरण के, बिना न्याय संगत जीवन यापन के, बिना दलित लोगों के प्रति करूणा दृष्टि फेरे तथा बिना मानव में भ्रातृ भावना की स्थापना किए विश्व कल्याण नहीं हो सकता और न मानव सभ्यता की रक्षा की जा सकती है।[25] अत: विश्व कल्याण के लिए अल्पसंख्यक वर्गों तथा प्रत्येक व्यक्ति को संस्कृति एवं शिक्षा सम्बन्धी अधिकार प्रदान किया गया है।

शोध संचयन
SHODH SANCHAYAN

ISSN 2249-9180 (Online)
ISSN 0975-1254 (Print)
RNI No.: DELBIL/2010/31292

Bilingual journal of Humanities & Social Sciences

Half Yearly

Vol-3 Issue-1
15 Jan-2012

मानवाधिकारों के आलोक में आधुनिक संस्कृत साहित्य

डॉ0 सुरचना त्रिवेदी

असिस्टेन्ट प्रोफेसर, संस्कृत, भगवानदीन आर्यकन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, लखीमपुर-खीरी

www.shodh.net

प्रो0 प्रभुदत्त स्वामी ने अपने महाकाव्य 'पूर्व' भारतम् में कहा है - आर्य देश में कुलीन, पर दु:ख कातर, परोपकार में लीन लोग अपने सुखों की उपेक्षा करके अपने प्राण न्यौछावर करके भी अपनी शरण में आए हुए लोगों की रक्षा करते हैं। अपने धर्म, अपने देश की रक्ष के व्रती लोगों के सामने मेरा (पुरू) का सिर झुक जाता है।[26] 'दयोदय' चम्पू काव्य में अहिंसा नामक व्रत की शिक्षा दी गई है। जो सभी मनुष्यो के लिए पालन करने योग्य है। साथ ही परोपकार, अतिथि-सत्कार, योग्य व्यक्तियों का सम्मान, गरीबी की रक्षा, सहायता तथा पीड़ितों की सहायता आदि गुणों की शिक्षा दी गई है।[27]

स्त्रियों की दशा-स्त्रियों के प्रति प्रताड़ना व शोषण रहित व्यवहार के अधिकार का पालन करने के उद्देश्य की पूर्ति करने वाली अनेक रचनाएं आधुनिक संस्कृत साहित्य में प्राप्त होती हैं।

कविवर परमानन्द शास्त्री ने अपने काव्य 'कौन्तेय' में कुन्ती के माध्यम से भारतीय नारी की तत्कालीन समय में विवशता, सामाजिक विषधान तथा बलिदान की व्यथा को वर्णित किया है। अर्जुन व श्रीकृष्ण के वचनों के माध्यम से मिथ्याकुल जाति, दम्भ, ग्लानि, परस्पर वैर का कारण आदि विषयों को दिया है। इसमें समाज की सदियों के विरुद्ध मानवाधिकार की रक्षा के लिए कवि ने आवाज उठाई है।[28]

कविवर वागीश शास्त्री ने 'नर्म सप्तराती में' श्लोकों के माध्यम से यह विषय उठाया है। जिसमें हास्य व्यंग्य के माध्यम से विवाह करके आये व्यक्ति द्वारा विवाह को दण्ड के रूप में परिभाषित करते हुए तथा एक अन्य श्लोक में दहेज लिप्सा का चित्रण करते हुए नारी की विवशता को दर्शाया गया है -

पुत्रं विवाहयित्वा च कश्चिद् प्रत्यागतो जनो:।

.....

कारावासश्च पुत्रस्य आजन्म समजायत।।[29]

तथा -

महोदया लुत्वमत: परं किं यथे हितं तद् द्रविणं गृहीत्वा।

निन्द्यानपि त्वं विमलं करोषि तदीय कन्या परिषीडनेन।।[30]

आचार्य बाबूराम अवस्थी ने 'पितरं प्रति पुत्र्या: पत्रम् [31] रचना में विवाहोपरान्त श्वसुरालय में प्रताड़ना झेल रही स्त्रीका मार्मिक वर्णन करके स्त्री दशा के अधिकार की रक्षा का ही बीड़ा उठाया है।

मानवाधिकार की अवधारण एक प्रगतिशील, व्यापक व विधि स्वरूप वाली है। जिसकी परिभाषा सभी देश अपने-अपने ढंग से करते हैं। भारतीय दृष्टि कोण से मानवाधिकार जीवन-स्वतन्त्रता-समानता एवं गरिमा से सम्बन्धित हैं। संस्कृत साहित्य के रचनाकारों के उक्त मानवाधिकारों का वर्णन अपने साहित्य में करते हुए प्रत्येक व्यक्ति के मूल्यवान मानवाधिकारों की घोषणा व सुरक्षा का सफल प्रयास किया है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद आधारभूत जीवन-मूल्य की उपेक्षा हुई है। जो हमारी राष्ट्रीय समस्याओं का मूलकारण रहा है। क्योंकि कर्त्तव्य भावना का स्थान अधिकार-बोध ने ले लिया था। उचित शिक्षा, माता-पिता-आचार्य तथा राजनैतिक नेताओं के व्यक्तिगत उदाहरण द्वारा बाल्यावस्था से ही प्रत्येक व्यक्ति में कर्त्तव्य भावना का विकास बहुत आवश्यक है। यह मानवाधिकारों की रक्षा का अपेक्षाकृत बड़ा और बेहतर आश्वासन है। संस्कृत वाङ्गमय के प्रगतिशील युग की समस्याओं से ओत-प्रोत रचनाएँ प्रदान करने वाले आधुनिक संस्कृत साहित्य में ये मानवाधिकार का सकारात्मक सुधारात्मक भावों से संवलित होकर प्रस्तुत किये गये है।

मानवाधिकार एक शक्तिमान कल्पना है। सभी भारत वासियों के लिए यह गर्व की बात है कि मानवाधिकारों का वर्णन हमारे संस्कृत वाङ्गमय से प्राप्त होता है।

सन्दर्भ:-

1.स्वातंत्र्योत्तर भारत में मानवाधिकार - डॉ0 कृष्ण मोहन माथुर पृ0-15 2.धर्मशास्त्र का इति0 पृ0 - 418 3.प्रो0 राधा वल्लभ त्रिपाठी - 'नवोन्मेष, राज0 संस्कृत अकादमी, जयपुर- पृ0118 4.स्वा0 भारत में मानवाधिकार - डॉ0 कृष्ण मोहन माथुर पृ0 - 14 5. वही - पृ0 18-19 6. आधुनिक संस्कृत साहित्य का इतिहास पृ0 8 7. आर्योदय 10/4 8. भारत पारिजात 11/88, 18/13/8/18 9. आधुनिक संस्कृत साहित्य का इतिहास - पृ0 186 10. इन्दिरा शतकम् - 96, 97 11. भारतस्तव: पृ0 5 12.भारत चन्द्रिका 715/1897 13.आधुनिक संस्कृत साहित्य का इतिहास - पृ0 33-44 14. राघवीयम् - 8/64 15. रास भारती - 1/80 16.संस्कृत चन्द्रिका - 7/5/1897 17. अग्निजा पृ0 207 18. वही पृ0 207 19. संस्कृत का समाज शास्त्र - पृ0 87 20. धन्या ममेयं धारा 21.शंखनाद: - प्रो0 राधा वल्लभ त्रिपाठी 22. वीरोदय 18/13-14 23.कथमहं नास्तिक : - डॉ0 महावीर प्रसाद द्विवेदी 24. वीरोदय 18/13-14 25. धर्मशास्त्र का इतिहास - पृ0 391

शोध संचयन
SHODH SANCHAYAN

ISSN 2249-9180 (Online)
ISSN 0975-1254 (Print)
RNI No.: DELBIL/2010/31292

Bilingual journal of Humanities & Social Sciences

Half Yearly

Vol-3 Issue-1
15 Jan-2012

मानवाधिकारों के आलोक में आधुनिक संस्कृत साहित्य

डॉ0 सुरचना त्रिवेदी

असिस्टेन्ट प्रोफेसर, संस्कृत, भगवानदीन आर्यकन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, लखीमपुर–खीरी

www.shodh.net

26. पूर्व भारतम् 1/13, 16/14 27.आधुनिक संस्कृत साहित्य का इतिहास – पृ0 438 28. कौन्तेय – 8 29. नर्मसप्तशती – 8 30.काव्य कुब्जलीलामृतम् 31. युग दर्शनम्